**ओ३म्**

**‘ईश्वर, समाज में अन्याय व नास्तिकता’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 **ईश्वर किसे कहते हैं? एक दशर्नकार ने इसका उत्तर दिया है कि जिससे यह सृष्टि बनी है, जो इसका पालन करता है तथा जो इस सृष्टि की अवधि पूरी होने पर प्रलय करता है, उसे ईश्वर कहते हैं।** इस उत्तर के अनुसार ब्रह्माण्ड में एक सच्चिदानन्दस्वरुप, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ ईश्वर नामी चेतन सत्ता है जिसने किसी उपादान कारण से इसे सृष्टि को बनाया है। किसके लिए वा क्यों बनाया है, इसका उत्तर भी वैदिक साहित्य वा दर्शनों से प्राप्त होता है। उपादान कारण उस पदार्थ वा सामग्री को कहते हैं जिससे कोई नया पदार्थ वा सामग्री बनाई जाती है जैसे कि आटे से रोटी वा भवन सामग्री से भवन आदि। ईश्वर ने किस उपादान कारण से सृष्टि को बनाया तो इसका उत्तर है प्रकृति नाम की जड़ व सत्व, रज और तम गुण वाली सूक्ष्म अनादि, अविनाशी, नित्य प्रकृति से ईश्वर ने इस संसार को रचा है। कैसे व किस प्रकार रचा, इसका ज्ञान जैसे किसी पदार्थ के रचने वाले निमित्त कारण को होता है, उसी प्रकार से ईश्वर को सृष्टि को रचने व चलाने का ज्ञान भी नित्य, अनादि व समय के बन्धन से रहित है व उसमें इस कार्य को करने की पूर्ण शक्ति, बल व सामथ्र्य है। वह ईश्वर हमेशा व सनातन काल से अपने कार्यों को करता चला आ रहा है। मनुष्य अल्पज्ञ अर्थात् अल्प व नयून ज्ञान व शक्ति वाला होता है, अतः वह ईश्वर के द्वारा किये जाने वाले सभी कार्यों को सम्रगता या पूर्णता से जान नहीं पाता। ईश्वर जितना जनायेगा उतना ही वह जान सकता है। हमें लगता है कि जिस प्रकार पहली से लेकर कक्षा दस या बारह तक का विद्यार्थी उसे पढ़ाने वाले अध्यापक वा आचार्य से जो एम.ए., बी.एड. व अधिक पढ़े होते हैं, उनके समान ज्ञान न तो रख सकता है और न ही उनके सब ज्ञान को जान व समझ सकता है। यह उल्लेखनीय है कि अध्यापक व विद्यार्थियों में समान जीवात्मा होता है। यदि विद्यार्थी अपने अध्यापक के समान ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो उसे उनकी ही तरह अध्ययन करना होगा जिसमें विद्यार्थी के तप के साथ समय व अध्ययन की समस्त सुविधाओं का उपलब्ध होना आवश्यक है। अतः यदि हमें ईश्वर के कार्यों व ज्ञान का पूरा पूरा ज्ञान व अनुभव नहीं है, तो इससे यह सिद्ध नहीं हो जाता कि ईश्वर है ही नहीं और यह सृष्टि उसके द्वारा नहीं बनाई गयी है। वैज्ञानिकों व किसी अन्य की दृष्टि में यदि यह सृष्टि बिना ईश्वर अपने आप बनी है तो उनका यह ज्ञान भी अज्ञान ही सिद्ध होता है क्योंकि किसी कर्ता के बिना क्रिया व बुद्धिपूर्व रचना एवं निर्माण कदापि नहीं हो सकता। यह संसार अर्थात् हमारा सौर मण्डल तो अति विशाल है और पूरे ब्रह्माण्ड पर विचार करें तो हम इसकी विशालता का अनुमान भी नहीं कर सकते। यह सारा का सारा ब्रह्माण्ड विज्ञान के नियमों पर आधारित होकर ही चल रहा है। जब एक छोटा सा भवन या कमरा अपने आप नहीं बन सकता, एक रोटी, दाल या सब्जी अपने आप नहीं बन सकती, कपड़े अपने आप धुल नहीं सकते तो यह सृष्टि तो बिना कर्ता के कदापि नहीं बन सकती, यही सिद्धान्त पुष्ट होता है। वैज्ञानिक चाहें ईश्वर से निर्मित सृष्टि के सिद्धान्त को स्वीकार करें या न करें, इसमें कितनी भी कमियां निकालें, परन्तु यह सिद्धान्त सत्य व प्रमाणिक है, ऐसा हम मानते हैं और इसके लिए हमारी आत्मा हमसे सहमत हैं।

 ईश्वर ने यह सृष्टि किस प्रकार व किस क्रम से बनाई, इसे जानने के लिए वेद, दर्शन, उपनिषद, सत्यार्थ प्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि ग्रन्थों के सृष्टि रचना विषयक प्रकरणों को गम्भीरता से पढ़ व समझ कर जाना जा सकता है। **ईश्वर ने यह सृष्टि किसके लिए बनाई? इसका उत्तर है कि ईश्वर ने अपने सृष्टि रचना व उसका पालन करने के अपने स्वभाव, ज्ञान, सामर्थ्य सहित जीवात्माओं के सुख व उनके पूर्व कल्प वा सृष्टि के अवशिष्ट कर्मों के फलों का भोग कराने के लिए बनाई है।** हम सृष्टि पर दृष्टि डालते हैं तो हमें सभी प्राणी सुख व दुःखों में संलिप्त दीखते हैं। सभी प्राणी सुख के लिए ही कर्म करते हुए प्रतीत होते हैं। हम भोजन करते हैं तो सुख के लिए, अध्ययन करते हैं तो सुख के लिए, धर्म का पालन करते हैं तो वह भी अभ्युदय व निःश्रेयस के लिए करते हैं जो कि एक प्रकार सुख ही है। इसी प्रकार से यह समस्त संसार वा सभी प्राणी सुख की प्राप्ति में ही लगे हुए हैं वा अग्रसर हैं। रात के बाद दिन और दिन के बाद रात आती जाती रहती है। इसी प्रकार से सृष्टि के बाद प्रलय और प्रलय के बाद ईश्वर सृष्टि की रचना करता है और जीवात्माओं को उनके कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में जन्म देता है। हम सुख की प्राप्ती के लिए तप व पुरुषार्थ करते हैं तो कभी सफल व कभी असफल हो जाते हैं। हम अपनी कमियां दूर कर पुनः प्रयत्न करते हैं तो फिर कभी सफलता व किसी में असफलता दोनों ही मिलती हैं। हमने पढ़ा व सुना है कि कई वैज्ञानिक आविष्कार ऐसे हुए हैं जिसमें किसी वैज्ञानिक को सफलता 100 से 250 बार विफल होने के बाद प्राप्त हुई। आज विज्ञान जिस स्थिति में आया है वह स्थिति एक बार प्रयास करने से नहीं हुई अपितु आज हमें इसका अनुमान लगाना भी कठिन है कि कितने लोगों ने कितनी कितनी बार इन छोटी छोटी सफलताओं के लिए प्रयास किये हैं? अतः मनुष्य को दुःख प्राप्त होने पर अधीर नहीं होना चाहिये अपितु एक, दो, तीन, चार व अनेक बार प्रयास करने चाहियें। बार बार प्रयत्न करने पर सफलता अवश्य मिलेगी। अतः एक या दो बार विफलता मिलने पर अधीर होकर नास्तिक बन जाना या ईश्वर के प्रति शंकायें करना उचित नहीं है। जो ऐसा करते हैं व जिन्होंने ऐसा किया है, वह हृदय से तो शुद्ध होते हैं परन्तु वह अपने पूर्व जन्मों व अन्य मनुष्यों व प्राणियों के भी पूर्व जन्मों के कर्मों, पुण्य व पापों को न जानने के कारण कई बार ईश्वर के अस्तित्व में शंका करने लगते हैं और सुख के आधार वैदिक कर्मकाण्ड को भी छोड़ देते हैं। ऐसा करना हमारी दृष्टि में उचित नहीं होता।

 हम देख रहे हैं कि समाज में न्याय कम परन्तु अन्याय अधिक है। इसी अन्याय के कारण ही देश की सरकार ने नोट बन्दी का निर्णय भी लिया है जिससे निर्धनों व वंचितों के हितों की रक्षा हो सके। हमें लगता है कि यह राजनीति से जुड़ा निर्णय होने के साथ प्रत्येक मनुष्य के जीवन को प्रभावित करने वाला निर्णय होने से एक धार्मिक व सामाजिक उचित व शुभ कार्य भी है। मनुष्येतर पशुओं आदि प्राणियों में भी देखा जाता है कि बड़े बलवान पशु छोटे कमजोर पशुओं को कष्ट देते हैं। बिल्ली व सांप चूहे को खा जाते हैं जबकि चूहे का कोई अपराध नहीं होता। शेर व अन्य हिंसक वनीय पशु वनों में शाकाहारी पशुओं को अपना आहार बनाते हैं। यह सब कर्म फल सिद्धान्त के कारण होना ही सम्भव प्रतीत होता है। यह पशुओं का पशुओं के प्रति व्यवहार है जिनमें बुद्धि तत्व पूर्ण विकसित नहीं होता। उनकी सभी क्रियायें ईश्वर प्रदत्त स्वभाविक ज्ञान के आधार पर सम्पन्न होती है। इनमें से किसी को दोषी और किसी को पीड़ित नहीं माना जा सकता। ईश्वर ने मनुष्य को सत्य व असत्य सहित शुभ व अशुभ तथा पाप व पुण्य का ज्ञान रखने व कराने वाली विवेक बुद्धि दी हुई है। वेदों का ज्ञान भी दिया है जिसमें मनुष्यों के लिए विहित व निषिद्ध कर्मों का ज्ञान है। अतः विवेक बुद्धि सम्पन्न कोई मनुष्य यदि अन्य प्राणियों, प्रकृति व पर्यावरण के विरुद्ध अपराध करता है तो वह ईश्वर व मानव समाज की दृष्टि में अपराधी व पापी होता है। बलवान, अहंकारी व लोभी व्यक्तियों के कारण अन्य निर्दोष मनुष्य, प्राणी और प्रकृति पर्यावरण विपरीत अर्थात् नकारात्मक रुप में प्रभावित होते हैं। अतः वेद व मनुस्मृति के अनुसार ऐसे लोग दण्डनीय होते हैं। मनुष्य क्योंकि अल्पज्ञ व बल, शक्ति, ज्ञान आदि में ससीम होता है, अतः मनुष्यों के कर्मों का पूरा पूरा न्याय तो ईश्वर की निर्णय व्यवस्था से ही होता है जिसके अनुसार कुछ क्रियमाण कर्मों का फल इसी जन्म में मिल जाता है और शेष अवशिष्ट कर्मों का फल परजन्म व बाद के जन्मों में मिलता है। इसी कारण देश, समाज व विश्व में छोटे-बड़े व अनेक भीषण अपराध होते हैं जिससे मनुष्य पीड़ित ही नहीं होते अपितु कई बार अपनी जान से भी हाथ धो बैठते हैं। क्या इस कारण किसी को नास्तिक हो जाना चाहिये, हमें लगता है कि ऐसा करना उस बुद्धिमान व्यक्ति के लिए उचित नहीं होगा। हमारी दृष्टि में तो उसे महर्षि दयानन्द, मर्यादा पुरुषोत्तम राम और योगेश्वर कृष्ण के जीवन व उनकी शिक्षाओं से प्रेरणा लेकर सत्य के पक्ष में आन्दोलन व समाज सुधार के कार्य करने चाहये। हम यहां ऋषि दयानन्द निर्दिष्ट मनुष्य के कर्तव्यों पर भी एक दृष्टि डाल लेते हैं। उन्होंने स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में लिखा है कि **‘मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की, कि चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथपि उनका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी चले ही जावें, पन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक (कोई मनुष्य) कभी न होवें।’** यदि ऐसा होगा तो समाज में अत्याचार कम होंगे जिससे ईश्वर के अस्तित्व में अविश्वास भी कम होगा। तब लोग नास्तिक न बन कर आस्तिक ही होंगे। बलवान मनुष्यों के अत्याचारों, अन्याय व शोषण ने ही संसार के लोगों को नास्तिक बनाया है, ऐसा हम अनुभव करते हैं।

हमें इस लेख को लिखने के कुछ ही समय बाद आर्य जगत के देदीप्यमान नक्षत्र आर्य विद्वान श्री भावेश मेरजा जी, भडूच की महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया प्राप्त हुई है। पाठकों के ज्ञानवर्धन हेतु हम उसे साभार प्रस्तुत कर रहें हैं। उन्होंने लिखा है कि **"श्री मनमोहन जी ! आपने आस्तिकता के पक्ष में अनेक उपयोगी बातें इस लेख में प्रस्तुत की हैं । आज की नई पीढ़ी की आस्तिक भावना धर्मध्वजियों के दम्भ, अनाचार आदि को देखकर भी प्रभावित होती है । अवैज्ञानिक, अतार्किक, अतिशयोक्तिपूर्ण बातों पर खड़ा किए गए कई व्यक्ति केन्द्रित मत-सम्प्रदाय भी नई पीढ़ी को नास्तिकता की ओर झुकाते हैं । परिवार में तथाकथित धार्मिक माता-पिता आदि के व्यवहारिक जीवन में यम-नियम या मानव मूल्यों का अभाव देखकर भी आस्तिकता से मन उठ जाता है । वेदोक्त ईश्वरवाद बुद्धिमान एवं तार्किक मस्तिष्कों को आकर्षित करने में समर्थ है परन्तु इसे अधिकाधिक समर्थ तथा समर्पित व्याख्याताओं, प्रचारकों तथा इसके साथ जीवन जीने वाले सच्चे धार्मिकों की आवश्यकता है । इस विचार प्रधान लेख के लिए आपको बधाई**।**"**

हमने ईश्वर तथा समाज में अन्याय पर अपने कुछ संक्षिप्त विचार ही इस लेख में प्रस्तुत किये हैं। नास्तिकता के कारणों पर प्रसंगानुसार कुछ विचार किया भी है। हम आशा करते हैं कि पाठक इस चर्चा को पसन्द करेंगे। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून/फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘ईश्वर का अस्तित्व आदि व अन्त से रहित है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 हम संसार में देखते हैं कि प्रत्येक पदार्थ का आदि अर्थात् आरम्भ होता है और कुछ व अधिक काल बाद उसका अन्त वा समाप्ति हो जाती है। आदि शब्द जन्म के लिए भी प्रयुक्त होता है और अन्त शब्द को मृत्यु के रुप में भी जाना जाता है। विश्व का अधिकांश भाग व लोग ईश्वर के अस्तित्व को मानने वाले हैं। हमारी दृष्टि में इस विश्वास का कारण वेद हैं। सृष्टि के आदि में ईश्वर के द्वारा वेद उत्पन्न हुए थे जो विषय व संख्या के अनुसार चार हैं। इनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हैं। इन वेदों के मुख्य विषय क्रमशः ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान हैं। ऋग्वेद के पहले ही मन्त्र में कहा गया है कि मैं ज्ञान व प्रकाश स्वरुप ईश्वर की स्तुति करता हूं। ऋग्वेद का ज्ञान अग्नि नामी ऋषि को ईश्वर ने दिया था। अतः सृष्टि में प्रथम उत्पन्न शरीरघारी जीवात्मा वा ऋषि को यह ज्ञात था कि संसार में एक ईश्वर नाम की चेतन व ज्ञानवान सत्ता है जिसकी की सभी मनुष्यों को स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये। वेदों का सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक विश्व भर में प्रचार रहा है। यही कारण रहा कि महाभारत काल के बाद आर्यों के आलस्य व प्रमाद के कारण व वेदों के प्रचार व प्रसार में बाधा आने पर भी वेदों के यथार्थ ज्ञान के लुप्त प्रायः हो जाने पर भी संसार के अधिकांश लोग परम्परा से ईश्वर को किसी न किसी रूप में मानते रहे। समय के साथ अन्धकार बढ़ता गया जिसके परिणाम स्वरुप विश्व में अनेक अन्धविश्वास व रूढ़ियां प्रचलित हो गईं और समाज जर्जरित व विश्रृंखलित हो गया।

 ईश्वर की कृपा और भारतीय आर्यों के सौभाग्य से गुजरात के मोरवी प्रान्त के टंकारा कस्बे में पं. करषन जी तिवारी के यहां 12 फरवरी सन् 1825 ई. को बालक मूलशंकर का जन्म हुआ जो बाद में महर्षि दयानन्द जी के नाम से प्रसिद्ध हुए। महर्षि दयानन्द ने अपने अपूर्व पुरुषार्थ व संकल्प शक्ति के आघार पर वेद एवं वैदिक साहित्य का गहन व तत्व-ज्ञान-परक अध्ययन किया जिससे वह वेदों के मर्मज्ञ व यथार्थ वैदिक ज्ञान से सम्पन्न हो गये। उन्होंने मथुरा के गुरु विरजानन्द सरस्वती से आर्ष व्याकरण और वैदिक सिद्धान्तों का अध्ययन किया था। ज्ञान प्राप्ति के बाद उन्होंने वेद वा वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार को अपने जीवन का उद्देश्य व लक्ष्य बनाया। उन्होंने प्रचार आरम्भ किया और 30 अक्तूबर, 1883 को मृत्यु होने तक जीवन की अन्तिम श्वांस तक दयानन्द जी ने वेदों का प्रचार किया। न केवल प्रचार ही किया अपितु वेदों के प्रचार प्रसारार्थ ही अपने प्राणों व जीवन का भी बलिदान किया।

 ईश्वर का सच्चा स्वरूप क्या है? इस विषय में महर्षि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में प्रविष्ट होते समय देश देशान्तर में अनेक मत व विचारधारायें थीं। ईश्वर व जीव को एक भी माना जाता था और ईश्वर को साकार, निराकार व ईश्वर का अवतार आदि भी मानते थे। अन्य भी अनेक मिथ्या मान्यतायें प्रचलित थी। महर्षि दयानन्द ने अपने वैदिक ज्ञान के आघार पर असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन किया और वेद के प्रमाणों से बताया कि ईश्वर सच्चिदानन्द (सत्य+चित्त+आनन्द-स्वरूप), निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वदेशी, सर्वदर्शी, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, अनादि, अनन्त, अजन्मा, अमर, नित्य व सृष्टिकर्ता है। अपनी समस्त वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों को प्रस्तुत करने के लिए उन्होंने सत्यार्थप्रकाश व ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आदि अनेक ग्रन्थों की रचना भी की। उन्होंने ईश्वर के विषय में जिन मान्यताओं व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया उनका वेद, इतर वेदानुकूल शास्त्र, तर्क व युक्ति आदि प्रमाणों के द्वारा स्पष्टीकरण व मण्डन भी किया व अपनी सभी मान्यताओं को सृष्टि क्रम के अनुकूल सत्य सिद्ध किया। **ईश्वर अनादि, अजन्मा, नित्य, अनुत्पन्न, अविनाशी, अमर व अनन्त है।** अनादि का अर्थ है जिसका आरम्भ न हो अर्थात् वह सदा से हो। इसका अर्थ है कि ईश्वर पूर्वकाल में सदा से है। कभी कोई ऐसा समय नहीं था जब कि ईश्वर न रहा हो। अजन्मा का अर्थ कि जिस प्रकार मनुष्य अपने माता-पिता से जन्म लेता है, वैसा ईश्वर के साथ नहीं होता। ईश्वर के माता-पिता नहीं हैं। वह स्वयं सिद्ध और स्वयं भू सत्ता है। उसे अपने अस्तित्व के लिए किसी अन्य अपने समान व बड़ी सत्ता की अपेक्षा नहीं है। वही सृष्टि की सबसे बड़ी व महानतम् सत्ता है। वह न तो जन्म लेती है, न उसका कभी जन्म हुआ और न ही उसकी कभी मृत्यु व अन्त होगा। वह सदा से है और सदा रहेगी। नित्य का अर्थ भी आ चुका है कि जो सदा से हो और सदा रहे उसे नित्य कहते हैं। ईश्वर सदा से होने व सदा रहने के कारण से ही नित्य कहा जाता है। हमने ईश्वर के लिए अनुत्पन्न शब्द का भी प्रयोग किया है। ईश्वर स्वयंभू व स्वयंसिद्ध होने के कारण उसे किसी अन्य पदार्थ व कारण से उत्पन्न होने की किंचित व किसी प्रकार से अपेक्षा नहीं है। वह उत्पत्ति धर्म से रहित है। अविनाशी का अर्थ है जिसका कभी विनाश व अन्त न हो। अमर का अर्थ है कि जो कभी मरे नहीं अर्थात् सदा जीवित रहे। अनन्त का अर्थ है कि जिसका अन्त नहीं होता। अन्त न होने से ही ईश्वर अनन्त कहा व माना जाता है। ऐसा स्वरूप ईश्वर का है। यदि ईश्वर का ऐसा स्वरूप न होता तो वह अनादि व नित्य कारण सूक्ष्म जड़ त्रिगुणात्मक प्रकृति से इस सृष्टि का निर्माण न कर पाता, न ही पालन कर पाता और तब अनादि व नित्य जीवात्मायें इस संसार में होकर भी कर्मानुसार जन्म न पाकर अपने अस्तित्व को सार्थक न कर पाती।

 अतः संसार में इस सृष्टि के बनाने व इसे चलाने वा पालन करने वाले ईश्वर का अस्तित्व तर्क व वेद के प्रमाणों से सिद्ध है। इसके साथ यह भी सिद्ध है कि ईश्वर अनादि, अजन्मा, नित्य, अमर, अनन्त व अविनाशी भी है। ईश्वर का यह जो स्वरूप है वह महर्षि दयानन्द सरस्वती के कारण हमें व सारे संसार को विदित हुआ है। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर सहित जीवात्मा और त्रिगुणात्मक सूक्ष्म जड़ प्रकृति को भी अनादि, अनुत्पन्न, नित्य, अमर व अविनाशी बताया व सिद्ध किया है। **ईश्वर, जीव व प्रकृति के इस त्रैतवाद नामक सर्वोत्तम एवं सत्य सिद्धान्त को देने के कारण महर्षि दयानन्द का सारा संसार ऋणी है। जब तक यह संसार है और इसकी प्रलय नहीं होती, यह संसार और आने वाली सभी पीढ़िया महर्षि दयानन्द की ऋणी रहेंगी।** महर्षि दयानन्द ने केवल त्रैतवाद का सिद्धान्त ही नहीं दिया अपितु अनेकानेक सिद्धान्तों सहित ईश्वर की सच्ची स्तुति, प्रार्थना व उपासना के लिए सन्ध्या की विधि और यज्ञ अग्निहोत्र का महत्व समझा कर उसे प्रत्येक आर्य व इतर सामान्य मनुष्य के लिए करना अनिवार्य बताया है। **ऋषि दयानन्द यह भी प्रावधान करते हैं कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है, यह ज्ञान सृष्टिक्रम के सर्वथा अनुकूल व अनुरुप है, अतः इसका पढ़ना व पढ़ाना तथा सुनना व सुनाना सभी श्रेष्ठ व सज्जन मनुष्यों का परम धर्म है।** जो वेद की आज्ञा का पालन नहीं करेगा वह ईश्ष्वर के विधान के अनुसार इस मनुष्य जन्म व भावी जन्मों में दण्डित व दुःख पायेगा। अतः सभी विवेकी मनुष्यों को वेद की शरण में आना चाहिये और इसके लिए सीढ़ी व मार्ग के रूप में सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन उपयोगी होता है। हम आशा करते हैं कि लेख से पाठकों को विषय स्पष्ट होगा। इसी के साथ इस चर्चा को समाप्त करते हैं।

  **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**